पटना उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार में

आपराधिक विविध वाद संख्या-14242/2016

शिकायत मामला संख्या 3163 वर्ष 2012, थाना-गोपालगंज, जिला-गोपालगंज से उत्पन्न

==========

अमित सिन्हा पिता- स्वर्गीय जगदीश प्रसाद सिन्हा, निवासी- देवी भवन, न्यू एरिया, कदम कुआँ, थाना- कदम कुआँ, जिला-पटना, वर्तमान में जिला- उप-पंजीयक, गोपालगंज के रूप में तैनात हैं।

..... याचिकाकर्ता/ओं

बनाम

1. बिहार राज्य

2. हरि मोहन पांडे, निवासी- तुर्काहा टोला, थाना- गोपालगंज, जिला-गोपालगंज।

..... विपरीत पक्षगण

==========

उपस्थिती:

याचिकाकर्ताओं के लिए	:	श्री मुक्तेश्वर दयाल, अधिवक्ता
		श्री विकास मोहन, अधिवक्ता
		श्री विक्रांत कुमार, अधिवक्ता
राज्य के लिए	:	श्री उपेंद्र कुमार, एपीपी
विरोधी पार्टी संख्या 2 के लिएः		श्री विश्वजीत कुमार मिश्रा, अधिवक्ता
		श्री बसुकी नाथ पांडे, अधिवक्ता

==========

भारतीय दंड संहिता – धारा 417, धारा 465

फौजदारी प्रक्रिया संहिता – धारा 482, धारा 202, धारा 197

रद्दीकरण – धोखाधड़ी –

*यह याचिका **20/3/2013** को पारित आदेश को चुनौती देती है, जो **क्रिमिनल शिकायत मामला संख्या 3163/2012** में पारित किया गया था, जिसमें **पांचवें अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, गोपालगंज** ने याचिकाकर्ता सहित सभी आरोपियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 417 और 465 के तहत अपराध का प्राथमिक मामला पाया और उन्हें समन जारी*

करने का निर्देश दिया। याचिकाकर्ता ने शिकायत के पूरे मामले को रद्द करने की भी प्रार्थना की थी, जिसमें याचिकाकर्ता के खिलाफ समन जारी किया गया था।

मामले के तथ्य –

*यह आपराधिक शिकायत **रामचंद्र पांडे** और उनकी पत्नी की मृत्यू के बाद उत्पन्न हुई थी, जो बिना किसी संतान के थे। शिकायतकर्ता, जो रामचंद्र पांडे के बहन के पुत्र थे, दावा करते थे कि वे संपत्ति के स्वामी हैं और आरोप था कि आरोपी **रामेश्वर पांडे** और अन्य व्यक्तियों ने धोखाधड़ी से उनकी संपत्ति को अपनी ओर से बेचने के लिए बिक्री विलेख तैयार कराया। इनमें से एक आरोपी नाबालिग था और उसके पास संपत्ति को बेचने का अधिकार नहीं था। याचिकाकर्ता, जो गोपालगंज में जिला उप-पंजीयक के पद पर कार्यरत थे, आरोपित हैं क्योंकि बिक्री विलेख की पंजीकरण प्रक्रिया उनके द्वारा की गई थी, हालांकि उन्होंने **14/9/2012** को कार्यभार संभाला था, जबकि घटनाएँ **5/6/2012, 26/6/2012, 3/9/2012 और 6/9/2012** के बीच घटीं।*

न्यायालय का विश्लेषण –

*याचिकाकर्ता ने यह तर्क दिया कि उनके खिलाफ किसी विशिष्ट आरोप का कोई ठोस आधार नहीं है और उन्हें केवल **गोपालगंज के जिला उप-पंजीयक** के रूप में कार्यरत होने के कारण आरोपित किया गया। उन्होंने यह भी कहा कि किसी सरकारी अधिकारी के खिलाफ अभियोजन की अनुमति प्राप्त करना आवश्यक है, जैसा कि **धारा 197** के तहत अनिवार्य है, जो किसी सरकारी अधिकारी के खिलाफ अपराध की कार्यवाही से पहले सक्षम प्राधिकरण से अनुमति प्राप्त करने का प्रावधान करता है। इस मामले में, याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई अनुमोदन प्राप्त नहीं किया गया था।*

*न्यायालय ने यह भी पाया कि आरोपों में कोई स्पष्ट और वास्तविक अपराध नहीं था, क्योंकि **बिक्री विलेख** एक वास्तविक दस्तावेज था, और इसमें धोखाधड़ी का कोई संकेत नहीं था। इसके अतिरिक्त, शिकायतकर्ता ने आरोप नहीं लगाया कि आरोपियों ने उन्हें संपत्ति छोड़ने के लिए धोखा दिया था, और न ही शिकायतकर्ता ने कोई संपत्ति आरोपियों को दी थी।*

न्यायालय का निर्णय –

*न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि याचिकाकर्ता के खिलाफ किसी प्रकार का अपराध साबित नहीं होता, क्योंकि आरोप केवल **नागरिक विवाद** से संबंधित थे, जो **सिविल कोर्ट** में हल किए जा सकते हैं। **धारा 197 क्रिमिनल प्रक्रिया संहिता** के तहत, याचिकाकर्ता को सरकारी अधिकारी के रूप में संरक्षित किया गया था, और इसके तहत **किसी भी कार्यवाही***

की स्वीकृति *पहले सक्षम प्राधिकरण से प्राप्त करनी चाहिए थी, जो कि इस मामले में प्राप्त नहीं की गई।*

अंततः, न्यायालय ने ***20/3/2013*** *के आदेश को रद्द करते हुए याचिकाकर्ता को बरी कर दिया।*

याचिका स्वीकृत की जाती है।

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

==========

समक्षः- माननीय न्यायमूर्ति श्री जितेंद्र कुमार

मौखिक निर्णय

तारीखः19-04-2024

वर्तमान याचिका, धारा 482 द०प्र०स० के तहत, 2012 के आपराधिक शिकायत मामला संख्या 3163 में पारित आदेश 20.03.2013 को रद्द करने के लिए दायर की गई है, जिसके तहत विद्वान अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, पंचम, गोपालगंज ने याचिकाकर्ता सहित सभी अभियुक्त व्यक्तियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 417 और 465 के तहत अपराध के मामले को *प्रथम दृष्टया* दंडनीय पाया है और उनके खिलाफ समन जारी करने का निर्देश दिया है। याचिकाकर्ता ने उस पूरी शिकायत को रद्द करने का भी अनुरोध किया है जिसमें याचिकाकर्ता के खिलाफ समन जारी किया गया है।

2. अभियोजन पक्ष का मामला आपराधिक शिकायत और शिकायतकर्ता द्वारा संज्ञान पूर्व जांच के दौरान दिए गए बयान से अभियोजन पक्ष का मामला यह उभर कर सामने आया है कि आरोपी रामेश्वर पांडे अपने चचेरे भाई रामचंद्र पांडे का बेटा नहीं है, जिनकी निःसंतान मृत्यु हो गई थी और उनकी पत्नी की भी बाद में मृत्यु हो गई थी। शिकायतकर्ता और अनिल मिश्रा और सुनील मिश्रा, जो रामचंद्र पांडे की बहन के बेटे हैं, रामचंद्र पांडे की संपत्ति पर कब्जा किए हुए हैं। आरोप है कि आरोपी रामेश्वर पांडे, देवव्रत पांडे, सुग्रीव कुमार मांझी, हारुन रशीद, नागेंद्र कुमार सिंह, वीर बहादुर प्रसाद, अमित कुमार सिन्हा (जो याचिकाकर्ता हैं), अरुण कुमार मिश्रा, धर्मेंद्र पांडे और मीर हसन अंसारी ने धोखाधड़ी से बिक्री विलेख के जरिए संपत्ति को अपने नाम पर बेच दिया है। यह भी आरोप लगाया गया है कि रामेश्वर पांडे की उम्र मात्र 15-16 वर्ष है और वह नाबालिग है तथा उसे रामचंद्र पांडे की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं है और इसलिए उसे संपत्ति किसी को बेचने का अधिकार नहीं है।

3. विद्वान याचिकाकर्ता के वकील ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता एक सरकारी अधिकारी है और वह अपनी अधिसूचना संख्या 3126/3703 दिनांक 30.06.2012 और 01.08.2012 के अनुसार जिला उप-पंजीयक, गोपालगंज के रूप में तैनात है और

14.09.2012 को कार्यभार संभाला है। वह आगे प्रस्तुत करता है कि कथित घटना की तारीख को वह गोपालगंज में तैनात नहीं था, जहां कथित अपराध कथित रूप से किया गया है। इस प्रकार, वह कथित अपराध से किसी भी तरह से जुड़ा हुआ नहीं है। घटना की कथित तिथि 05.06.2012, 26.06.2012, 03.09.2012 और 06.09.2012 है, जबकि उन्होंने 14.09.2012 को गोपालगंज में कार्यभार संभाला।

4. वह आगे प्रस्तुत करता है कि याचिकाकर्ता एक सरकारी अधिकारी है, जिसे जिला उप-पंजीयक, गोपालगंज के रूप में तैनात किया गया है और उसे केवल गोपालगंज में जिला उप-पंजीयक होने के कारण आरोपी के रूप में फंसाया गया है और शिकायत याचिका में याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई विशिष्ट आरोप नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि किसी भी सरकारी अधिकारी पर तब तक मुकदमा नहीं चलाया जा सकता जब तक कि धारा 197 द०प्र०स० के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा मुकदमा चलाने की मंजूरी नहीं दी जाती है। लेकिन वर्तमान मामले में, कोई मंजूरी प्राप्त नहीं की गई है, जबकि जिला उप-पंजीयक, गोपालगंज द्वारा बिक्री-विलेख का कथित पंजीकरण उनकी आधिकारिक क्षमता के निर्वहन में किया गया है और ऐसी स्थिति में मंजूरी का अनुदान संस्था और जिला उप-पंजीयक, गोपालगंज के अभियोजन को जारी रखने के लिए *अनिवार्य* है।

5. उन्होंने आगे कहा कि कथित तथ्यों और परिस्थितियों के अनुसार भी कोई अपराध नहीं बनता है। वास्तव में, यह मृतक रामचंद्र पांडे और आरोपी रामचंद्र पांडे, जिन्होंने रामेश्वर पांडे के पुत्र के रूप में बिक्री विलेख निष्पादित किया है, के पीछे छोड़ी गई संपत्ति के अधिकार और शीर्षक के संबंध में एक नागरिक प्रकृति का विवाद है। हालांकि, शिकायतकर्ता के अनुसार, रामचंद्र पांडे निःसंतान मर गए और इसलिए, उनकी संपत्ति शिकायतकर्ता और अनिल मिश्रा और सुनील मिश्रा को विरासत में मिली है और इसलिए, रामचंद्र पांडे का संपत्ति पर कोई अधिकार और शीर्षक नहीं है और इसलिए, उन्हें इसे बेचने का कोई अधिकार नहीं है। बिक्री विलेख के अनुसार, आरोपी रामेश्वर पांडे 18 वर्ष का है और वह रामचंद्र पांडे का पुत्र है, हालांकि, शिकायतकर्ता इस बात से इनकार कर रहा है कि वह

रामचंद्र पांडे का दत्तक पुत्र है। इस प्रकार, कथित तथ्य और परिस्थितियाँ नागरिक प्रकृति का विवाद बनाती हैं और इसे केवल सिविल कोर्ट द्वारा ही निपटाया जा सकता है, लेकिन कोई अपराध नहीं बनता है। उन्होंने आगे कहा कि भले ही यह मान लिया जाए कि रामेश्वर पांडे द्वारा बेची गई भूमि शिकायतकर्ता की है, लेकिन शिकायतकर्ता को कोई नुकसान नहीं है क्योंकि यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि कोई भी व्यक्ति अपने से बेहतर स्वामित्व हस्तांतरित नहीं कर सकता है और इस तरह, शिकायतकर्ता को कोई नुकसान नहीं है। इसके अलावा, बिक्री विलेख वास्तविक है, हालांकि विक्रेता/आरोपी रामेश्वर पांडे का दावा कि वह मृतक रामचंद्र पांडे का पुत्र है, शिकायतकर्ता द्वारा यह कहते हुए चुनौती दी गई है कि रामचंद्र पांडे की मृत्यु निःसंतान हुई और आरोपी रामेश्वर पांडे मृतक रामचंद्र पांडे का दत्तक पुत्र नहीं है।

6. इस प्रकार, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, कथित तथ्य और परिस्थितियाँ, अधिक से अधिक, विशुद्ध रूप से सिविल प्रकृति का विवाद बनाती हैं। इसलिए, आरोपित आदेश और पूरी शिकायत रद्द करने योग्य है।

7. हालांकि, राज्य के लिए विद्वान एपीपी और विपक्षी पक्ष संख्या 2 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता सहित अभियुक्तों ने विपक्षी संख्या 2-शिकायतकर्ता की भूमि को हड़पने की साजिश रची है। इसलिए, आरोपित आदेश में कोई अवैधता या दुर्बलता नहीं है और शिकायत कानून की नज़र में बनाए रखने योग्य नहीं है।

8. इससे पहले कि मैं पक्षों के प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करना शुरू करूं, द०प्र०स० की धारा 482 के दायरे और दायरे को देखना उचित होगा।

9. धारा 482 द०प्र०स०, उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति की व्यावृती है और यह निम्नानुसार हैः-

> "482. **उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्तियों की व्यावृती-** इस संहिता की कोई बात उच्च न्यायालय की ऐसे आदेश देने की अन्तर्निहित शक्ति को सीमित या प्रभावित करने वाली न समझी जाएगी जैसे इस संहिता के अधीन किसी आदेश को प्रभावी करने के लिए या किसी न्यायालय की कार्यवाही

का दुरुपयोग निवारित करने के लिए या किसी अन्य प्रकार से न्याय के उद्देश्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हो।"

10. हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल [1992 अनुपूरक (1) एससीसी 335, धारा 482 सीआरपीसी के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के दायरे और सीमा पर प्रसिद्ध निर्णय है, जो अभी भी मान्य है और सर्वोच्च न्यायालय सहित सभी न्यायालयों द्वारा इसका पालन किया जा रहा है और इस पर भरोसा किया जा रहा है।

11. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भजन लाल मामले (उपर्युक्त) में निम्न प्रकार से निर्णय दिया:-

"102. अध्याय XIV के अंतर्गत संहिता के विभिन्न प्रासंगिक प्रावधानों की व्याख्या तथा अनुच्छेद 226 के अंतर्गत असाधारण शक्ति या संहिता की धारा 482 के अंतर्गत अंतर्निहित शक्तियों के प्रयोग से संबंधित निर्णयों की श्रृंखला में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के सिद्धांतों की पृष्ठभूमि में, जिन्हें हमने ऊपर उद्धृत और पुनरुत्पादित किया है, हम उदाहरण के तौर पर निम्नलिखित श्रेणियों के मामले देते हैं, जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जा सकता है, हालांकि कोई सटीक, स्पष्ट रूप से परिभाषित और पर्याप्त रूप से चैनलाइज्ड और अनम्य दिशानिर्देश या कठोर सूत्र निर्धारित करना संभव नहीं हो सकता है और ऐसे असंख्य प्रकार के मामलों की एक विस्तृत सूची देना संभव नहीं है, जिनमें ऐसी शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(1) <u>जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट या शिकायत में लगाए गए आरोप, भले ही उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाए और उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाए, प्रथम दृष्टया कोई अपराध नहीं बनाते हैं या आरोपी के खिलाफ कोई मामला नहीं बनाते हैं।</u>

(2) जहां प्रथम सूचना रिपोर्ट और एफआईआर के साथ दी गई अन्य सामग्री, यदि कोई हो, में लगाए गए आरोप किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा नहीं करते हैं, तो संहिता की धारा 155(2) के दायरे में मजिस्ट्रेट के आदेश के अलावा धारा 156(1) के तहत पुलिस अधिकारियों द्वारा जांच को उचित ठहराया जा सकता है।

(3) जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए निर्विवाद आरोप और उनके समर्थन में एकत्र किए गए साक्ष्य किसी अपराध के किए जाने का खुलासा नहीं करते हैं और आरोपी के खिलाफ कोई मामला नहीं बनाते हैं।

(4) जहां एफआईआर में लगाए गए आरोप संज्ञेय अपराध नहीं हैं, बल्कि केवल असंज्ञेय अपराध हैं, वहां पुलिस अधिकारी द्वारा मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना जांच की अनुमति नहीं है, जैसा कि संहिता की धारा 155(2) के तहत परिकल्पित है।

(5) जहां एफआईआर या शिकायत में लगाए गए आरोप इतने बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं, जिनके आधार पर कोई भी विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है।

(6) जहां संहिता या संबंधित अधिनियम (जिसके तहत आपराधिक कार्यवाही शुरू की जाती है) के किसी भी प्रावधान में कार्यवाही शुरू करने और जारी रखने पर स्पष्ट कानूनी रोक लगाई गई है और/या जहां संहिता या संबंधित अधिनियम में कोई विशिष्ट प्रावधान है, जो पीड़ित पक्ष की शिकायत के लिए प्रभावी निवारण प्रदान करता है।

(7) जहां आपराधिक कार्यवाही में स्पष्ट रूप से दुर्भावनापूर्ण रूप से भाग लिया जाता है और/या जहां कार्यवाही अभियुक्त पर बदला लेने के गुप्त उद्देश्य से और निजी और व्यक्तिगत द्वेष के कारण उसे परेशान करने के उद्देश्य से दुर्भावनापूर्ण रूप से शुरू की जाती है।

103. हम इस आशय की चेतावनी भी देते हैं कि आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने की शक्ति का प्रयोग बहुत ही संयम से और सावधानी से किया जाना चाहिए और वह भी दुर्लभतम मामलों में; यह कि न्यायालय द्वारा एफआईआर या शिकायत में लगाए गए आरोपों की विश्वसनीयता या वास्तविकता या अन्यथा के बारे में जांच शुरू करना न्यायोचित नहीं होगा और यह कि असाधारण या अंतर्निहित शक्तियां न्यायालय को अपनी इच्छा या सनक के अनुसार कार्य करने का मनमाना अधिकार क्षेत्र प्रदान नहीं करती हैं।

(जोर दिया गया)

12. श्रीमती नागवा बनाम वीरन्ना शिवलिंगप्पा कोनुजाल्गी [(1976) 3 एससीसी 736] में, सीआरपीसी की धारा 202 और 204 के दायरे पर विचार करते हुए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित दिशा-निर्देश और आधार निर्धारित किए, जिनके आधार पर कार्यवाही रद्द की जाएगी।

"(1) जहां शिकायत में लगाए गए आरोप या उनके समर्थन में दर्ज किए गए गवाहों के बयानों को उनके अंकित मूल्य पर लिया जाए तो आरोपी के खिलाफ कोई मामला नहीं बनता है या शिकायत में आरोपी के खिलाफ लगाए गए अपराध के आवश्यक तत्वों का खुलासा नहीं होता है;

(2) जहां शिकायत में लगाए गए आरोप स्पष्ट रूप से बेतुके और स्वाभाविक रूप से असंभव हैं, ताकि कोई भी विवेकशील व्यक्ति कभी भी इस निष्कर्ष पर न पहुंच सके कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है।

(3) जहां मजिस्ट्रेट द्वारा प्रक्रिया जारी करने में प्रयोग किया गया विवेकाधिकार मनमाना और मनमानीपूर्ण है, जो या तो किसी साक्ष्य पर आधारित नहीं है या ऐसी सामग्री पर आधारित है जो पूरी तरह अप्रासंगिक या अस्वीकार्य है; और

(4) जहां शिकायत में मौलिक कानूनी दोष हैं, जैसे कि मंजूरी का अभाव, या कानूनी रूप से सक्षम प्राधिकारी द्वारा शिकायत का अभाव और इसी तरह की अन्य बातें।"

(जोर दिया गया)

13. पेप्सी फूड्स लिमिटेड एवं अन्य बनाम विशेष न्यायिक मजिस्ट्रेट एवं अन्य, [(1998) 5 एससीसी 749] में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न प्रकार से निर्णय दिया है:

"28. आपराधिक मामले में अभियुक्त को तलब करना एक गंभीर मामला है। आपराधिक कानून को स्वाभाविक रूप से लागू नहीं किया जा सकता.....।"

(जोर दिया गया)

14. जी. सागर सूरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [(2000) 2 एससीसी 636] में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न प्रकार से निर्णय दिया है:

"8. संहिता की धारा 482 के अंतर्गत क्षेत्राधिकार का प्रयोग बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए। अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय को मामले की सतही जांच नहीं करनी चाहिए। यह देखा जाना चाहिए कि क्या कोई मामला, जो अनिवार्य रूप से सिविल प्रकृति का है, उसे आपराधिक अपराध का आवरण दिया गया है। आपराधिक कार्यवाही कानून में उपलब्ध अन्य उपायों का शॉर्टकट नहीं है। प्रक्रिया जारी करने से पहले एक आपराधिक अदालत को बहुत सावधानी बरतनी पड़ती है। अभियुक्त के लिए यह एक गंभीर मामला है। इस न्यायालय ने कुछ सिद्धांत निर्धारित किए हैं जिनके आधार पर उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 482 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करना है। इस धारा के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किसी भी अदालत की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए किया जाना चाहिए।

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परमजीत बत्रा बनाम उत्तराखंड राज्य, (2013) 11 एससीसी 673 में निम्न प्रकार से निर्णय दिया है:

"12. संहिता की धारा 482 के अंतर्गत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय को सतर्क रहना चाहिए। इस शक्ति का उपयोग संयम से तथा केवल किसी न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने अथवा न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाना चाहिए। कोई शिकायत आपराधिक अपराध का खुलासा करती है या नहीं, यह उसमें आरोपित तथ्यों की प्रकृति पर निर्भर करता है। आपराधिक अपराध के आवश्यक तत्व मौजूद हैं या नहीं, इसका निर्णय उच्च न्यायालय को करना होता है। सिविल लेन-देन का खुलासा करने वाली शिकायत में भी आपराधिक स्वरूप हो सकता है। लेकिन उच्च न्यायालय को यह देखना चाहिए कि क्या कोई विवाद जो अनिवार्य रूप से सिविल प्रकृति का है, उसे आपराधिक अपराध का आवरण दिया जा सकता है। ऐसी स्थिति में, यदि कोई सिविल उपाय उपलब्ध है और वास्तव में अपनाया गया है, जैसा कि इस मामले में हुआ है, तो उच्च न्यायालय को न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए आपराधिक कार्यवाही को रद्द करने में संकोच नहीं करना चाहिए।

(जोर दिया गया)

16. उपर्युक्त वैधानिक प्रावधानों और केस कानूनों से यह उभर कर आता है कि किसी भी अपराध का संज्ञान लेने और शिकायत मामले में किसी भी आरोपी को समन जारी करने के लिए, शिकायत में लगाए गए आरोप और शिकायतकर्ता और उसके गवाहों द्वारा धारा 202 सीआरपीसी के तहत जांच के दौरान दिए गए बयानों के आधार पर *प्रथम दृष्टया* अपराध का पता चलना चाहिए। हालांकि, ऐसे आरोप या बयान स्पष्ट रूप से बेतुके और विवेकशील दिमाग के लिए स्वाभाविक रूप से असंभव नहीं होने चाहिए। इसके अलावा, शिकायत में लगाए गए आरोप/बयानों और धारा 200 सीआरपीसी के तहत जांच के दौरान

समग्र रूप से जांच की जानी चाहिए, लेकिन इस स्तर पर ऐसे बयानों की सत्यता की जांच नहीं की जा सकती। बयानों को उनके अंकित मूल्य पर लिया जाना चाहिए ताकि यह देखा जा सके कि *प्रथम दृष्टया* मामला बनता है या नहीं। इसके अलावा, यदि दिए गए तथ्यों के आधार पर केवल सिविल विवाद बनता है, तो शिकायत या संज्ञान/सम्मन आदेश को रद्द किया जाना चाहिए ताकि न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग रोका जा सके और न्याय के उद्देश्यों को बढ़ावा दिया जा सके।

17. अब, विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या शिकायत में लगाए गए आरोप या उसके समर्थन में दर्ज किए गए गवाहों के बयान को आधार मानकर आरोपी के खिलाफ कोई मामला बनता है।

18. शिकायत में लगाए गए आरोपों और शिकायतकर्ता और उसके गवाहों के बयानों के अनुसार धारा 200 सीआरपीसी के तहत, विद्वान् मजिस्ट्रेट ने दिनांक 20.03.2013 के आदेश के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 417 और 465 के तहत दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया है।

19. भारतीय दंड संहिता की **धारा 417** में धोखाधड़ी करने के लिए दंड का प्रावधान है। भारतीय दंड संहिता की धारा 415 में धोखाधड़ी को परिभाषित किया गया है। **राम दास बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 1970 (2) एससीसी 740** में, **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** ने धोखाधड़ी के अपराध के घटकों का विश्लेषण इस प्रकार किया है:

> "(i) किसी व्यक्ति को धोखा देकर उसे धोखाधड़ी या बेईमानी से प्रेरित किया जाना चाहिए;
>
> (ii) (अ) इस तरह धोखा दिए गए व्यक्ति को किसी व्यक्ति को कोई संपत्ति देने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए, या किसी व्यक्ति को किसी संपत्ति को रखने के लिए सहमति देनी चाहिए; या
>
> (ब) इस तरह धोखा दिए गए व्यक्ति को जानबूझकर कुछ ऐसा करने या करने से मना किया जाना चाहिए जो वह नहीं करता या नहीं करता अगर उसे धोखा नहीं दिया गया होता; और

(iii) (ii)(ब) द्वारा कवर किए गए मामलों में, कार्य या चूक ऐसी होनी चाहिए जो व्यक्ति के शरीर, मन, प्रतिष्ठा या संपत्ति को नुकसान या हानि पहुंचाए या पहुंचाने की संभावना हो।"

20. इस प्रकार, अभियुक्त द्वारा धोखाधड़ी या बेईमानी से प्रलोभन देकर धोखा देने वाले को अभिवेदन करना भारतीय दंड संहिता की धारा 415 के अंतर्गत अपराध करने के लिए अनिवार्य शर्त है। लेकिन इस मामले में, मुझे लगता है कि शिकायतकर्ता का ऐसा कोई आरोप नहीं है कि किसी अभियुक्त ने उसे किसी संपत्ति को देने के लिए कोई अभिवेदन किया हो। इस प्रकार, किसी अभिवेदन के अभाव में, शिकायतकर्ता द्वारा धोखाधड़ी या बेईमानी से प्रलोभन देने का प्रश्न ही नहीं उठता।

21. इसके अलावा, शिकायतकर्ता ने अभियुक्तों को कोई संपत्ति नहीं दी है, न ही उसने बिक्री-पत्र निष्पादित किया है। इस प्रकार, यदि कोई हो, तो संबंधित भूमि पर उसका स्वामित्व अभी भी सुरक्षित है, क्योंकि यदि हस्तांतरण विलेख/बिक्री-पत्र किसी अन्य व्यक्ति द्वारा निष्पादित किया गया है, जिसके पास संबंधित भूमि का स्वामित्व नहीं है, तो उसका स्वामित्व क्रेता को हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है। क्रेता तभी स्वामित्व हस्तांतरित करवा सकता है, जब विक्रेता के पास संपत्ति का स्वामित्व हो। यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि कोई भी व्यक्ति अपने से बेहतर स्वामित्व हस्तांतरित नहीं कर सकता है, **जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यूरेका बिल्डर्स बनाम गुलाबचंद, (2018) 8 एससीसी 67** में स्पष्ट रूप से निम्नलिखित माना है:

"35. यह विधि का स्थापित सिद्धांत है कि कोई व्यक्ति किसी मूर्त संपत्ति में किसी अधिकार, शीर्षक या हित को केवल प्रतिफल या अन्यथा हस्तांतरित करने के लिए ही किसी अन्य व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकता है। दूसरे शब्दों में, किसी व्यक्ति का किसी मूर्त संपत्ति में जो भी हित है, वह केवल उसी हित को दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरित कर सकता है और कोई अन्य हित नहीं, जो उसके पास मूर्त संपत्ति में नहीं है।

36. इसलिए, एक बार यह साबित हो जाने पर कि किसी मूर्त संपत्ति के हस्तांतरण की तिथि पर, संपत्ति के विक्रेता के पास उस पर कोई विद्यमान अधिकार, शीर्षक या हित नहीं था, तो ऐसी संपत्ति के खरीदार को प्रतिफल या अन्यथा उसके द्वारा खरीदी गई संपत्ति में कोई अधिकार, शीर्षक और हित नहीं मिलेगा। ऐसा हस्तांतरण एक अवैध और शून्य हस्तांतरण होगा।"

22. इसलिए, याचिकाकर्ता सहित आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ मामले के कथित तथ्यों और परिस्थितियों पर भारतीय दंड संहिता की धारा 417 को लागू करने का कोई सवाल ही नहीं है।

23. भारतीय दंड संहिता की **धारा 465** में जालसाजी के लिए सजा का प्रावधान है। भारतीय दंड संहिता की धारा 463 में जालसाजी को परिभाषित किया गया है, जो इस प्रकार है:

"**463. जालसाजी-** जो कोई किसी मिथ्या दस्तावेज या मिथ्या इलेक्ट्रानिक अभिलेख अथवा दस्तावेज या इलेक्ट्रानिक अभिलेख के किसी भाग को इस आशय से रचता है कि लोक को या किसी व्यक्ति को नुकसान या क्षति की जाए, या किसी दावे या हक का समर्थन किया जाए, या यह किया जाए कि कोई व्यक्ति संपत्ति अलग करे या कोई अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा करे या इस आशय से रचता है कि कपट करे, या कपट किया जा सके, वह कूट रचना करता है।

24. सुशील सूरी बनाम केंद्रीय जांच ब्यूरो, [एआईआर 2011 एससी 1713] में **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** द्वारा बताए गए जालसाजी के मूल तत्व इस प्रकार हैं:

"(1) झूठे दस्तावेज़ या उसके किसी भाग का निर्माण और (2) ऐसा निर्माण धारा में निर्दिष्ट इरादे से होना चाहिए, अर्थात, (ए) (i) जनता या (ii) किसी व्यक्ति को नुकसान पहुंचाना या उसका उल्लंघन करना; या (ब) किसी दावे या शीर्षक का समर्थन करना; या (स) किसी व्यक्ति को संपत्ति से अलग करना, या

(द) किसी व्यक्ति को स्पष्ट या निहित अनुबंध में प्रवेश करने के लिए मजबूर करना; या (ई) धोखाधड़ी करना या धोखाधड़ी की जा सकती है।"

25. भारतीय दंड संहिता की **धारा 464** मिथ्या दस्तावेज़ बनाने को परिभाषित करती है। इसमें निम्नलिखित बातें कही गई हैं:

" 464. मिथ्या दस्तावेज़ रचना-

उस व्यक्ति के बारे में यह कहा जाता है कि वह व्यक्ति मिथ्या दस्तावेज या मिथ्या इलेक्ट्रानिक अभिलेख रचता है –पहला - जो बेईमानी से या कपटपूर्वक इस आशय से –

(क) किसी दस्तावेज को या दस्तावेज के भाग को रचित, हस्ताक्षरित, मुद्रांकित या निष्पादित करता है;

(ख) किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख को या इलेक्ट्रानिक अभिलेख के भाग को रचित या सम्प्रेषित करता है;

(ग) किसी इलेक्ट्रानिक अभिलेख पर कोई इलेक्ट्रानिक चिह्नक करता है;

(घ) किसी दस्तावेज का निष्पादन या इलेक्ट्रानिक चिह्नक की प्रमाणिकता द्योतन करने वाला कोई चिन्ह लगाता है,

कि यह विश्वास किया जाए कि ऐसी दस्तावेज या दस्तावेज के भाग, इलेक्ट्रानिक अभिलेख या इलेक्ट्रॉनिक चिह्नक की रचना, हस्ताक्षरण, मुद्रांकन, निष्पादन, सम्प्रेषण या संयोजन ऐसे व्यक्ति द्वारा या ऐसे व्यक्ति के प्राधिकार द्वारा किया गया था, जिसके द्वारा या जिसके प्राधिकार द्वारा उसकी रचना, हस्ताक्षरण, मुद्रांकन या निष्पादन, सम्प्रेषण या संयोजन न होने की बात वह जानता है; अथवा

दूसरा - जो किसी दस्तावेज या इलेक्ट्रानिक अभिलेख के किसी तात्विक भाग में परिवर्तन, उसके द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, चाहे ऐसा व्यक्ति ऐसे परिवर्तन के समय जीवित हो या नहीं, उस दस्तावेज या इलेक्ट्रानिक अभिलेख के रचित, निष्पादित या इलेक्ट्रानिक चिह्नक से संयोजित किये जाने के पश्चात् उसे रद्द

करने द्वारा या अन्यथा, विधिपूर्वक प्राधिकार के बिना बेईमानी से या कपटपूर्वक करता है; अथवा

तीसरा - जो किसी व्यक्ति द्वारा, यह जानते हुए कि ऐसा व्यक्ति दस्तावेज या इलेक्ट्रानिक अभिलेख की विषय वस्तु को परिवर्तन के रूप को, चित्तविकृति या मत्तता की हालत में होने के कारण जान नहीं सकता या उस प्रवंचना के कारण, जो उससे की गई है, जानता नहीं है, उस दस्तावेज या इलेक्ट्रानिक अभिलेख को बेईमानी से, या कपटपूर्वक हस्ताक्षरित, मुद्रांकित, निष्पादित या परिवर्तित किया जाना या इलेक्ट्रानिक अभिलेख पर अपने इलेक्ट्रानिक चिह्नक किया जाना कारित करता है ।

रेखांकन

26. **माननीय सर्वोच्च न्यायालय** को **मोहम्मद इब्राहिम एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, [(2009) 8 एससीसी 751]** में इसी तरह के तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने का अवसर मिला था, जो बिहार के मधुबनी जिले से आया था। इस मामले में भी, शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया था कि उसकी जमीन को आरोपी ने बिना किसी मालिकाना हक के बेच दिया था। यहां, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से निम्नलिखित माना:

"17. <u>जब कोई व्यक्ति किसी ऐसी संपत्ति का दावा करते हुए कोई दस्तावेज निष्पादित करता है जो उसकी नहीं है, तो वह यह दावा नहीं कर रहा है कि वह कोई और है और न ही वह यह दावा कर रहा है कि उसे किसी और ने अधिकृत किया है। इसलिए, ऐसे दस्तावेज का निष्पादन (जिसका उद्देश्य ऐसी संपत्ति को हस्तांतरित करना है जिसका वह मालिक नहीं है) धारा 464 के तहत परिभाषित झूठे दस्तावेज का निष्पादन नहीं है। यदि निष्पादित किया गया दस्तावेज झूठा दस्तावेज नहीं है, तो कोई जालसाजी नहीं है। यदि कोई जालसाजी नहीं है, तो न तो धारा 467 और न ही धारा 471 लागू होती है।</u>"

(जोर दिया गया)

27. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने रणधीर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, [(2021) 14 एससीसी 626] में भी निम्न प्रकार से निर्णय दिया:

> "24. एक धोखाधड़ी, मनगढ़ंत या जाली विलेख का अर्थ एक ऐसा विलेख हो सकता है जिसे वास्तव में निष्पादित नहीं किया गया था, लेकिन एक ऐसा विलेख जो कथित निष्पादकों को जाली बनाकर धोखाधड़ी से निर्मित किया गया था। यह कहना एक बात है कि बेला रानी ने संपत्ति की बिक्री को अधिकृत करने वाले मुख्तारनामा को धोखे से निष्पादित किया, यह जानते हुए कि उनके पास संपत्ति को हस्तांतरित करने का कोई अधिकार नहीं था। यह कहना दूसरी बात है कि मुख्तारनामा स्वयं एक जाली, धोखाधड़ी, मनगढ़ंत या निर्मित था, जिसका अर्थ है कि इसे बेला रानी द्वारा कभी निष्पादित नहीं किया गया था। उनके हस्ताक्षर जाली थे। यह समझना असंभव है कि जांच अधिकारी प्रथम दृष्टया कैसे संतुष्ट हो सकते हैं कि विलेख जाली या मनगढ़ंत है या धोखाधड़ीपूर्ण है, जबकि उन्होंने स्पष्ट निष्पादनकर्ता बेला रानी की जांच भी नहीं की है, जिन्हें गवाह के रूप में भी नहीं बताया गया है।

28. प्रस्तुत मामले में भी, किसी भी आरोपी व्यक्ति द्वारा बिक्री-पत्र निष्पादित करते समय प्रतिरूपण का कोई आरोप नहीं है। किसी ने भी शिकायतकर्ता या किसी अन्य के जाली हस्ताक्षर नहीं किए हैं। आरोपी, रामेश्वर पांडे ने अपने सह-आरोपी के पक्ष में विचाराधीन भूमि के संबंध में बिक्री-पत्र निष्पादित किया है, जो रामचंद्र पांडे का पुत्र होने का दावा करता है, जिनकी पहले ही मृत्यु हो चुकी है। इसलिए, विचाराधीन बिक्री-पत्र कोई जाली दस्तावेज नहीं है। यह वास्तविक है। क्या विचाराधीन बिक्री-पत्र हस्तान्तरितकर्ता को स्वामित्व प्रदान करता है, यह एक कानूनी प्रश्न है जिसका निर्णय सक्षम सिविल न्यायालय द्वारा किया जाना है। लेकिन याचिकाकर्ता सहित आरोपी व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 465 लागू नहीं होती है।

29. इस प्रकार, इस मामले में भारतीय दंड संहिता की धारा 465 के तहत दंडनीय कोई अपराध नहीं बनता है।

30. इसलिए, मेरे विचार में, शिकायत में किसी भी अपराध का खुलासा नहीं होता है, भारतीय दंड संहिता की धारा 417 और 465 के तहत किसी भी अपराध का खुलासा तो दूर की बात है। वर्तमान मामले के कथित तथ्य और परिस्थितियाँ, अधिक से अधिक, पक्षों के बीच विशुद्ध रूप से सिविल प्रकृति का विवाद बनाती हैं, जिसके लिए उचित सिविल मुकदमा दायर करके सिविल कोर्ट में उपाय किया जा सकता है। वर्तमान शिकायत स्पष्ट रूप से न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है और इसे रद्द किया जाना चाहिए और विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा पारित विवादित आदेश कानून की नज़र में टिकने योग्य नहीं है। तदनुसार, आवेदन स्वीकार किया जाता है।

31. मैं यह भी पाता हूं कि याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोपित आदेश धारा 197 सीआरपीसी के प्रावधानों के मद्देनजर टिकने योग्य नहीं है, जो लोक सेवकों को उनके द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करने या कार्य करने का दावा करने के दौरान किए गए किसी भी अपराध के लिए अभियोजन के खिलाफ संरक्षण प्रदान करता है, किसी भी अदालत को उचित सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना ऐसे अपराध का संज्ञान लेने से रोकता है। इस मामले में, निर्विवाद रूप से याचिकाकर्ता के खिलाफ ऐसी कोई मंजूरी नहीं दी गई है और आरोप के अनुसार, याचिकाकर्ता संबंधित बिक्री विलेख के पंजीकरण के समय गोपालगंज का उप-पंजीयक था। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि बिक्री विलेख का पंजीकरण किसी भी जिले के किसी भी उप-पंजीयक के आधिकारिक कर्तव्य का हिस्सा है। इसलिए, इस मामले में, कथित अपराध का संज्ञान लेने और याचिकाकर्ता के खिलाफ समन जारी करने से पहले मंजूरी की आवश्यकता थी। इसलिए, इस आधार पर भी धारा 482 सीआरपीसी के तहत आरोपित आदेश को रद्द किया जा सकता है। निम्नलिखित अधिकारियों पर भरोसा किया जाता है:

(i) शदाक्षरी बनाम कर्नाटक राज्य, एआईआर 2024 एससी (आपराधिक) 271

(ii) डी. देवराज बनाम ओवैस सबीर हुसैन, (2020) 7 एससीसी 695
(iii) शंकरन मोइत्रा बनाम साधना दास, (2006) 4 एससीसी 584
(iv) उड़ीसा राज्य बनाम गणेश चंद्र ज्यू, (2004) 8 एससीसी 40
(v) उड़ीसा राज्य बनाम गणेश चंद्र ज्यू, (2004) 8 एससीसी 40
(vi) पी.पी.उन्नीकृष्णन बनाम पुट्टियोटिल अलीकुट्टी, एआईआर 2000 एससी 2952
(vii) एस.बी. साहा और अन्य बनाम एम.एस. कोचर, एआईआर 1979 एससी 1841

32. तदनुसार, वर्तमान याचिका को अनुमति दी जाती है, जिसमें आपराधिक शिकायत मामला संख्या 3163/2012 में अपर मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट-V, गोपालगंज द्वारा याचिकाकर्ता के संदर्भ में पारित दिनांक 20.03.2013 के विवादित आदेश को रद्द और अलग रखा जाता है।

(जितेंद्र कुमार, न्यायमूर्ति)

चंदन/

रविशंकर-

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।